



आदिवासी समुदाय की समस्याएँ एवं चुनौतियाँ पर एक लेख

नाम: डॉ. हितेशकुमार लालसिंहभाई बामणिया

पदनाम: सहायक प्रोफेसर

श्री सहजानंद एम.एस.डबल्यु कॉलेज, नरसिंगपुर

शिर्षक

प्रस्तुत शोध-पत्र अध्यापक के द्वारा आदिवासी समुदाय की समस्याएँ एवं चुनौतियाँ पर लिखित है। हजारों वर्षों से जंगलों और पहाड़ी इलाकों में रहने वाले आदिवासियों को हमेशा से दबाया और कुचला जाता रहा है जिससे उनकी जिन्दगी अभावग्रस्त ही रही है। इनका खुले मैदान के निवासियों और तथाकथित सभ्य कहे जाने वाले लोगों से न के बराबर ही संपर्क रहा है। केंद्र सरकार आदिवासियों के नाम पर हर साल हजारों करोड़ रुपए का प्रावधान बजट में करती है। इसके बाद भी 6-7 दशक में उनकी आर्थिक स्थिति, जीवन स्तर में कोई बदलाव नहीं आया है। स्वास्थ्य सुविधाएं, पीने का साफ पानी आदि मूलभूत सुविधाओं के लिए वे आज भी तरस रहे हैं। इन सभी बातों को जानने के बावजूद आदिवासियों की समस्या को तय कर पाना कतई आसान नहीं है। हर क्षेत्र की परिस्थितियां अलग-अलग हो सकती है, जैसे कि कई क्षेत्रों के आदिवासी बिना मूलभूत सुविधा के ही संतुष्ट हों तो कहीं इन सब की दरकार भी हो सकती है। कहने का अर्थ यह है कि समस्या अलग-अलग क्षेत्रों में रह रहे आदिवासियों की भिन्न-भिन्न हो सकती है। वैसे सामान्यतः ऐसा होता नहीं है क्योंकि आदिवासी समाज की अपनी एक पहचान है जिसमें उनके रहन-सहन, आचार-विचार एक जैसे ही होते हैं। इधर बाहरी प्रवेश, शिक्षा के कारण इस ढांचे में भी थोड़ा बदलाव जरूर आया है।

हिन्दी उपन्यासों का आदिवासी जीवन पक्ष वैसा नहीं है जैसा गैर आदिवासी लोग उसे समझते हैं। वास्तविक चित्र गढ़े गए चित्र से बहुत अलग है। हालांकि आदिवासी विमर्श, स्त्री विमर्श और दलित विमर्श लगभग साथ ही हिन्दी साहित्य में विमर्श के केंद्र में उपस्थित होते हैं, इसलिये ये तीनों अपनी विचारधारा और चिंतन से एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। यहाँ यह कहने की जरूरत नहीं कि वर्तमान समय अस्मिताओं के उदय और उनके संघर्ष का समय है। आदिवासी समाज का इतिहास बहुत प्राचीन है, यह इतना ही प्राचीन है जितना मानव इतिहास। आज के गैर-जन जातीय लोग प्रायः आदिवासी समाज और संस्कृति से बिल्कुल अनभिज्ञ हैं, जिसके कारण उन्हें आदिवासी समाज के प्रति गलत धारणाओं और सूचनाओं ने घेर लिया है। अब तक लोग आदिवासियों को बर्बर और जंगली समझते रहे हैं। वास्तव में अपने को सभ्य समझने वाले कुंठित मानसिकता से ग्रसित लोगों ने स्वयं ही आदिवासियों के प्रति गलत धारणाएँ प्रचारित-प्रसारित कर अज्ञानता का परिचय दिया है। दुखद है कि हमारे संविधान में नागरिकों के अधिकारों को सुरक्षित रखने के लिए एक से



बढ़कर एक अधिनियम तो बनाये गए हैं, लेकिन जब उन अधिनियमों को आदिवासी समाज पर क्रियान्वित करने का समय आता है, तो वे अधिनियम महज छलावा साबित होते हैं। इस लेख में आदिवासीयों के जीवन में आने वाली समस्याओं की विवरण किया है।

❖ **कुंजी शब्द :** आदिवासी समुदाय, आदिवासी समुदाय की समस्याएं एवं चुनौतियां

परिचय

भारत में अलग-अलग आदिवासी समुदाय हैं। ये आदिवासी समुदाय हमारे देश के विभिन्न अंचलों में निवास करते हैं। इन आदिवासी समुदायों की समस्याएँ भौगोलिक क्षेत्रों से जुड़ी हुई हैं। लद्दाख, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड, मणिपुर और मिजोरम, मेघालय के आदिवासी समुदाय मुख्य रूप से पहाड़ों पर निवास करते हैं। इन समुदायों के समक्ष कृषि की दृष्टि से जूम खेती से सम्बंधित समस्याएँ हैं। इनके पास पर्याप्त कृषि योग्य भूमि नहीं है। अतः ये समुदाय पहाड़ों पर कृषि योग्य भूमि निकालकर उस पर खेती करते हैं। धान, मकई, रागी (मड़वा) आदि की खेती के अतिरिक्त ये लोग मुख्य रूप से विभिन्न सज्जियों का उत्पादन करते हैं। कहीं-कहीं पर पशुपालन और दुग्ध उत्पादन इनकी आय का मुख्य स्रोत है, जैसे - अरुणाचल प्रदेश के तवांग आदि क्षेत्रों में याक के पालन से उन्हें दूध और घी मिलता है। गत कुछ वर्षों से पहाड़ी अंचल के आदिवासियों में एक नई चेतना आई है और वे विभिन्न फलों के उत्पादन में भी अग्रणी भूमिका निभा रहे हैं। आज वह संतरा, पपीता, अमरुद, मूंगफली, आदि फलों का उत्पादन करके अपनी अधिक स्थिति को मजबूत कर रहे हैं। पहाड़ी अंचलों में अधिक वर्षा के कारण भूस्खलन होता है। तब जूम खेती को काफी नुकसान पहुँचता है। अतः भू-स्खलन के कारण कृषि और आवागमन प्रभावित होता है। आवागमन की समस्या पहाड़ी अंचल के आदिवासियों के समक्ष एक मुख्य चुनौती है। जिसका वे बराबर सामना करते हैं।

शिक्षा की दृष्टि से भी पहाड़ी अंचल के आदिवासी जूझते रहे हैं। उन्हें अच्छी शिक्षा प्राप्त के लिए अपने बच्चों को बाहर भेजना पड़ता है। सौभाग्य से कुछ वर्षों से पहाड़ी अंचलों में केंद्रीय विद्यालय, नवोदय विद्यालय और केंद्रीय विश्वविद्यालयों की स्थापना से शिक्षा सम्बंधित समस्याएँ धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही हैं। अब कुछ वर्षों से पहाड़ी अंचल के आदिवासियों के बच्चों को इंजीनियरिंग और मेडिकल शिक्षा भी अपने अंचल में मिलने लगी है। जिन पहाड़ी क्षेत्रों में, पहाड़ी प्रांतों में आदिवासी समुदाय बहुमत में हैं, वहाँ राजनीतिक बागडोर भी आदिवासी समुदाय के हाथों में है। लेकिन जहाँ इनकी संख्या कम है वहाँ इनके समक्ष राजनीतिक और सामाजिक चुनौतियाँ भी पैदा होती रहती हैं। आदिवासी समुदायों के शैक्षिक और सामाजिक विकास के लिए जो धनराशि केंद्र आवंटित करता है वह राशि अन्य मदों पर व्यय होती रही है। अप्रत्यक्ष रूप से कहीं-कहीं पर आदिवासियों का शोषण होता रहा है। पहाड़ी क्षेत्रों में जंगलों से प्राप्त जड़ी-बूटियाँ भी स्थानीय व्यापारी ओने-पोने दामों में क्रय करते रहे हैं। हर स्तर पर अधिक शोषण का चक्र अभी भी किसी ना किसी



रूप में कायम है। इसके अतिरिक्त पहाड़ी अंचल के जनजातीय समुदाय के लोगों की सर्व सुलभ, मेदानी क्षेत्र के लोगों के पास से कुछ भूमि है। इसलिए अधिकांश लोग इन्हें इधर के नेपाली समझकर गत कुछ वर्षों से उत्तर और दक्षिण भारत में पूर्वोत्तर भारत के जनजातीय समुदाय के विद्यार्थियों पर आक्रमण और अत्याचार होते रहे हैं। कभी-कभी यौन सम्बंधी जघन्य अपराध भी होते रहे हैं। पूर्वोत्तर भारत और उसके जनजातीय समुदायों के विषय में दक्षिण ओर उत्तर के लोगों की समझ बहुत अच्छी नहीं है। जिसके कारण पूर्वोत्तर के जनजातीय समुदाय के लोगों को अपने से अलग समझा जाता है। सामाजिक और सांस्कृतिक भिन्नता भी इस समस्या का एक कारण है। साथ ही भाषा और शारीरिक बनावट की भिन्नता भी प्रमुख समस्या है। दुर्भाग्य से हमारे देश के पाठ्यक्रमों में अपने देश के लोगों के विषय में गहराई से जानने की सामग्री नहीं है। कहने तात्पर्य यह है कि कोई ऐसा सम्पूर्ण पाठ्यक्रम नहीं है, जिससे देश के लोगों के बारे में गहराई से जाना जा सके।

उत्तर और पश्चिमोत्तर भारत में भी पूर्वोत्तर, दक्षिण भारत जैसी स्थिति बनी हुई है, बल्कि यहाँ पर तो शोषणतंत्र का मायाजाल और गहरा है। भील, गोंड, संथाल, उराँव, हल्बी आदि समूचे भारत वर्ष के सभी जनजातीय समुदायों के समक्ष एक समस्या समान रूप से व्याप्त है और वह है नशाखोरी की समस्या। यह समस्या इन लोगों को आर्थिक और शारीरिक दृष्टि से बहुत नुकसान पहुंचा रही है। ये समस्या घटने के स्थान पर तेजी से पनप रही है। देशी-विदेशी ड्रग्स माफिया इसका पूरा लाभ उठा रहे हैं।

❖ संशोधन लेख के उद्देश्य

1. आदिवासी समुदाय की समस्याएँ
2. आदिवासी समुदाय की चुनौतियाँ
3. आदिवासी समुदाय की आर्थिक, सामाजिक, आदि प्रकार कि कई समस्याएँ

❖ संशोधन पद्धति

इस शोध पत्र के लिए शोधकर्ता ने द्वितीयक आंकड़ों का प्रयोग किया है। इसके लिए शोधार्थी ने विभिन्न पुस्तकों, पत्रिकाओं, समाचार पत्रों, पाक्षिक, इन्टरनेट आदि का प्रयोग किया है।

❖ जनजातीय समुदाय की समस्याएँ निम्नलिखित इस प्रकार से हैं -

➤ सामाजिक समस्या

आज आदिवासियों के बीच एक नई समस्या ने जन्म ले लिया है वह है आदिवासी कन्याओं का अपहरण और उनका बलात्कार। कुछ गैर आदिवासी उन पर शोध करने के नाम पर उनके इलाके में घुस जाते हैं। उसके बाद उनका विश्वास जीतकर उनकी लड़कियों के साथ शादी रचाते हैं, यौन सुख का आनंद लेते हैं।



और फिर वह वहाँ से भाग जाते हैं। इस समस्या पर ध्यानाकर्षित करते हुए इतिहासकार लाला जगदलपुरी लिखते हैं - मद्य - मांस, नृत्य- गीतों और आकर्षक यौन- संबंधों वाली बस्तर की आरण्य की - संस्कृति ने महा नगरीय सभ्यता को इस कदर प्रभावित किया है कि समय समय पर जहाँ - तहाँ अप्रमाणिक रूप से अपहरण काण्ड घटते रहते हैं और आदिवासी -बालाओं का जीवन बरबाद होता रहता है। यह उल्लेखनीय है कि बस्तर के आदिवासी -समाज में गैर - आदिवासियों द्वारा गठित की गई आदिवासी बालाओं के लिए प्रायः कोई गुंजाइश नहीं रह जाती और सभ्य साँप उन्हें धोखा देकर, निर्लज्जापूर्वक डस लेते हैं। आरण्य की - संस्कृति के उन्नायक इन अरण्य वासियों के बीच मूल रूप से मुझे यदि कोई पिछड़ापन दिखाई देता है, तो वह है उनका बौद्धिक पिछड़ापन।

➤ आर्थिक समस्या

जनजाति समाज की प्रमुख समस्या ऋण ग्रस्तता है। ऋण की समस्या आज वर्तमान में भी बनी हुई है। इस प्रक्रिया को सरकार ने समाप्त करने के लिए कई कानून बनाए हैं लेकिन इसकी उपेक्षा करके लोग आदिवासियों की जमीनों को हड़प रहे हैं। बहुआ मजदूरी इसका सबसे बड़ा कारण है। सरकारी संस्थाओं के द्वारा ऋण प्रक्रिया जटिल, अशिक्षा, गरीबी और बेरोजगारी है। योगेश अटल और यतींद्र सिंह सिसोदिया जी ऋणग्रस्तता के बारे में लिखते हैं ऋण की समस्याओं को सुलझाने तथा आपसी झगड़ों को निपटाने के लिए पहले आदिवासी अपनी पंचायतों का सहारा लेते थे। अब वे इन मामलों को सरकारी अदालतों में ले जाते हैं। रुपया ऐठने के लिए वकील उन्हें मुकदमेबाजी के लिए उकसाते हैं। इस प्रकार सरल, सामान्य और संतुलित आदिजातीय जीवन में द्वेष, वेमनस्य और विश्रृंखलता पैदा हो गई है। बि. जी . वर्गीज का कहना है जहाँ मुक्त जीवन जीने वाले आदिवासियों को अपनी भूमि और अधिकारों से वंचित होना पड़ रहा है, वहीं अधिकतर दलित भूमिहीन हैं और यथा स्थिति से खीजे रहते हैं, जो उनके -सम्मान एवं कल्याण के लिए हानिकारक है। वे समानता और निष्पक्षता चाहते हैं और जाति -उत्पीड़न का अंत चाहते हैं। अतः विरोधाभास यह है कि जो लोग चाहते हैं कि उन्हें अकेला छोड़ दिया जाए, उन्हें अनैच्छिक घुसपैठ का सामना करना पड़ता है और जो उसमें शामिल होना चाहते हैं, उन्हें सामाजिक और आर्थिक बहिष्कार सहना पड़ता है।

➤ राजनीतिक समस्या

आदिवासियों की कुछ ऐसी मूलभूत समस्याएँ हैं, जो उनके विकास में बाधक है। परन्तु यह बिलकुल भी नहीं कहा जा सकता कि सभी समस्याएँ गैर आदिवासी समाज द्वारा दी गई हैं। कुछ समस्याएँ उन्होंने खुद भी पैदा की हैं। कुछ समस्याएँ ऐसी हैं जो विकास और परिवर्तन के बीच की प्रक्रिया में विभिन्नता के टकराव से उत्पन्न होती है। जब उसे हम समझ नहीं पाते हैं तो वही न समझी बाद में विफलता का रूप धारण कर लेती है। ऐसी स्थिति में यह बेहद जरूरी हो जाता है कि अलग-अलग समूहों में बंट आदिवासियों के बीच



तालमेल बिठाकर एक जनसामान्य नागरिक के तौर पर बराबरी का दर्जा दिया जाए। उनका विकास किया जाए और उनकी पहचान को समाप्त होने से बचाया जाये।

आदिवासी क्षेत्र में राजनीतिक गतिविधियों का मकड़जाल अब तेजी से फैलने लगा है। वहाँ के ग्राम पंचायतों के चुनावी माहौल अधिक तीव्र और भयानक होते हैं। एक दूसरे के लोग खून के प्यासे तक हो जाते हैं। पहले ऐसा दृश्य देखने को नहीं मिलता था, लेकिन उनकी शर्तें कुछ कठिन अवश्य होती थीं। आदिवासी अपने सरदार को चुनने के लिए बाहुबल के मानकों को बाकायदा निर्वाह करते हैं। सभी प्रदेशों के राज्यपाल को इतना अधिकार मिला हुआ होता है कि वह जनजाति क्षेत्रों में विकास का एक खूबसूरत माहौल पैदा कर दे लेकिन राज्यपाल पांचवी अनुसूची के अधिकारों का प्रयोग ही नहीं करता है। अब तक हरेक जनजातीय राज्य में पंचायतों के आम कानून ही जनजाति क्षेत्रों पर लागू होते रहे हैं। जिससे हमेशा राजनीतिक समस्या बनी रहती है।

➤ धार्मिक एवं सांस्कृतिक समस्या

आदिवासी समाज में कई ऐसी कुप्रथाएँ हैं, जिनकी वजह से उन्हें समस्याओं का सामना करना पड़ता है। चाहे उनके वैवाहिक रीति-रिवाज हो या फिर अंत्येष्टि रीवाज। नागा जनजाति में विवाह की ऐसी ही एक प्रथा है। जनक अरविन्द लिखते हैं - नागा जाति में विवाह की रीतियाँ भी बड़ी आकर्षक होती हैं। विवाह के लिए केवल उसी लड़के को लड़की के योग्य समझा जाता है। जिसने कम से कम दो चार आदमियों का खून कर रखा हो। हमारी तरह इन लोगों में माँ बाप को विवाह के लिए वर खोजने की चिंता नहीं करनी पड़ती। लड़का अथवा लड़की स्वयं ही एक दूसरे को पसन्द करके अपना जीवन साथी निश्चित कर लेते हैं।

भूमि हस्तांतरण की समस्याएँ- आदिवासी समाज मुख्य रूप से अपनी जीविका के लिए कृषि पर ही आश्रित होता है। आकड़ों के अनुसार लगभग 90 प्रतिशत जनजातीय आबादी कृषक है। जल, जंगल, जमीन की लड़ाई लड़ने वाले आदिवासियों को अपनी भूमि से बहुत लगाव होता है। जबकि जनसंख्या वृद्धि के कारण भूमि की मांग में वृद्धि हुई है। साथ ही संचार व्यवस्था का विस्तार होने से समस्त जनजातीय क्षेत्र बाहरी लोगों के लिए खुल गया है। इससे भूमि हस्तांतरण जैसी समस्या बढ़ी है। बाहरी वर्ग के कारण भूमि अधिग्रहण काफी हुआ है। मेरे एमफिल शोध के दौरान मेरा अध्ययन क्षेत्र बिहार का अधौराप्रखंड था हम उसकी बात करें तो यहां बाहरी लोग काफी संख्या में आये और उन्होंने आदिवासियों से सस्ते दामों पर जमीन खरीदा और यहीं बस गए। आदिवासियों की जमीन पर अब वह खुद मकान बना कर रह रहे हैं, कृषि के साथ-साथ वह यहाँ व्यवसाय भी कर रहे हैं। भूमि हस्तांतरण एक मुख्य कारण है जिससे आज उनकी आर्थिक स्थिति दयनीय हुई है। जब से ये जनजातियाँ मुख्य धारा और इनकी वित्त संस्थाओं के सम्पर्क में आयीं, धन की कमी के कारण उनकी भूमि का हस्तांतरण बढ़ता गया। सीमित संसाधनों में रहने वाले आदिवासियों को आज विवाह, उत्सवों, कपड़ों, मदिरा तथा अन्य आवश्यकताओं के लिए सदैव धन की आवश्यकता रहने लगी है। साथ ही



कृषि भूमि भी कम उपज वाली होने के कारण इन्हें खाने की सामग्री भी बाजार से खरीदनी पड़ती है। यहां देखने वाली बात यह है कि पैसों के अभाव में ये साहूकारों और दुकानदारों से ऋण लेते हैं और बाद में वही कर्ज चुकता नहीं कर पाने के कारण उन्हें अपनी भूमि से हाथ धोना पड़ता है, यही वजह है कि भूमि हस्तांतरण का एक मुख्य कारण ऋण भी है।

➤ नस्लीय समस्या

हमारे देश में नस्लीय समस्या एक मुख्य समस्या है। आए दिन हमें नस्लीय भेद-भाव पर टीका-टिप्पणी सुनने को मिलती रहती है। इस नस्लीय समस्या से सबसे ज्यादा अगर कोई प्रभावित हुआ है तो वह जनजातीय समुदाय है। आदिवासी समुदाय को लोग जंगली, वनवासी, जानवर आदि के नाम से पुकारते हैं। कभी कभी तो लोग आपस में बात करते हुए टिप्पणी करते हैं यार तुम एकदम आदिवासी जंगली हो क्या इस तरह की प्रतिक्रिया सभ्य समाज को कतई शोभा नहीं देता है। आदिवासी समुदाय के लोग विद्यार्थी जीवन से लेकर अधिकारी पद तक का सफर नस्लीय टिप्पणी के साथ तय करते हैं। देश और समाज दोनों के लिए यह विचारणीय प्रश्न है? अभी हाल ही में अंतरराष्ट्रीय तीरंदाज महिला आदिवासी झानू हांसदा नस्लीय भेदभाव की शिकार हुईं। झानू हांसदा वर्जीनिया (अमेरिका) में संपन्न विश्व पुलिस खेलकूद में शानदार प्रदर्शन करते हुए तीन स्वर्ण पदक जीत करके भारत का नाम रोशन किया। वह विश्व तीरंदाजी, सैफ खेल, एशियाई तीरंदाजी आदि में कई पदक जीत चुकी हैं। वह अपने दर्द को खुद मीडिया के सामने बयान करती हैं पिछले सात वर्षों से मैं सब इंस्पेक्टर ही बनी हुई हूँ। मेरे बाद आने वालों को प्रमोशन दे दिया गया। मैंने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर (ओलंपिक छोड़कर) कई पदक जीते हैं लेकिन मुझे आदिवासी होने का दंश झेलना पड़ रहा है। मुझे आज तक प्रमोशन नहीं दिया गया

➤ भाषायी समस्या

आज आदिवासी समाज की भाषा एवं लिपि को संजोने की जरूरत है। लिपियों के समाप्त होने एक समुदाय की पहचान खत्म हो जाती है। हो जनजाति की भाषा एवं लिपि सम्बंधी समस्या के सन्दर्भ में डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा का मत है -हो भाषा और साहित्य के विकास की गति काफी मन्तर रही है। प्रकाशन के अभाव में अनेक लेखकों और कवियों की रचनाएँ प्रकाश में नहीं आ सकी हैं। हो रचनाओं की प्रस्तुति मुख्य रूप से हो भाषा में होती रही है। अतः उसके पाठक अधिकांश हो भाषा-भाषी ही रहे। आदिवासी की बोली-भाषा मौखिक तथा अति प्राचीन है। आम लोगों के लिए बोलना और पढ़ना बेहद कठिन है। जिसके कारण कई ऐसी जनजातीय बोलियाँ आज विलुप्त होने की कगार पर हैं। अगर समय रहते इनका संरक्षण नहीं किया गया तो यह हमेशा के लिए समाप्त हो जाएँगी। आज जरूरत है कि आदिवासी बोली-भाषा को विश्वविद्यालय, विद्यालय के पाठ्यक्रमों में एक विषय के रूप में रखा जाए। तभी इसका संरक्षण संभव है। अब हो जनजाति



भाषा को ही ले लीजिए इसका साहित्य लेखन प्रचुर मात्रा में है परन्तु इसका विकास नहीं हो पा रहा है। इस परिप्रेक्ष्य में किसी भी भाषा और साहित्य का विकास उसके लेखकों के साथ-साथ उसके प्रकाशकों और पाठकों की संख्या पर निर्भर करता है।

➤ आदिवासी शैक्षिक समस्याएँ

कुछ वर्षों पूर्व आदिवासी समुदाय की बोली भाषा, गीत - संगीत आदि सब मौलिक ही थे। अब जाकर उसे लिपिबद्ध किया जा रहा है हालाँकि यह प्रयास 00 प्रतिशत में से 30 प्रतिशत ही हो रहा है बाकी 70 प्रतिशत का कुछ पता नहीं है। आदिवासी समुदाय की भाषा -बोली अन्य समुदायों की अपेक्षा भिन्न है। इस भिन्नता के कारण उनसे वार्तालाप करना कठिन है। वह इसलिए भी दुष्कर है, क्योंकि आधुनिक मानव के पास आदिवासी बोलियों का ज्ञान नहीं है। जब तक उनकी बोलियों का ज्ञान नहीं होगा तब तक आदिवासी समुदाय में शिक्षा का पचार प्रसार उच्चतर स्तर पर नहीं हो पायेगा। व्याकरण, ध्वनि, भाषा आदि जैसी समस्याएँ इनके सामने मुंह खोले खड़ी हैं। आदिवासी शैक्षणिक समस्या के संदर्भ में विश्व बरूवा का कहना है हिंदी भाषा का व्याकरण एक समस्या है। भारतीय आर्य भाषाएँ वैज्ञानिक तत्त्व पर आधारित हैं, लेकिन हिंदी व्याकरण की लिंग विधि एक अवैज्ञानिक रीति है विशेषतः अहदी भाषियों के लिए। इस रीति से जनजाति लोग बिल्कुल अपरिचित हैं। अतः यह भी एक समस्या है। जब लिंग ज्ञान दिया जाता है तो पढ़ना ही छोड़ देते हैं। इसके साथ पाठ्य पुस्तक की आलोचना करना उचित होगा। यों ही ये लोग आर्थिक दृष्टि से दुर्बल हैं और अर्थनीति का ज्ञान उनमें नहीं है। शिक्षा में जो खर्च होता है, वह दरअसल खर्च नहीं जमा है। यह बात वे नहीं जानते। उनकी धारणा है कि किताब खरीदकर पढ़ना बेकार है। किताब खरीदने में जो खर्च होगा उतने में दूसरा काम हो जाएगा।

शिक्षा मानव के विकास में सहायक होता है। आदिवासी समाज का शिक्षित न होना बहुत बड़ी समस्या है। आदिवासी समाज का शिक्षा से कम सरोकार होना उनके कई समस्या से जुड़ा हुआ है। ऋणग्रस्तता, भूमि हस्तांतरण, गरीबी, बेरोजगारी, स्वास्थ्य आदि कई समस्याएँ हैं जो शिक्षा से प्रभावित होती हैं। जनजातीय समूहों पर औपचारिक शिक्षा का प्रभाव बहुत कम पड़ा है। इधर शिक्षा से जुड़ी कई योजनाएँ हैं जिनमें से कुछ केंद्र सरकार ने सिर्फ अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति पर ही केंद्रित रखा है। 1950 से पहले जनजातीय लोगों को शिक्षित करने के लिए भारत सरकार की कोई भी प्रत्यक्ष योजना नहीं थी। संविधान के प्रभावी होने के पश्चात अनुसूचित जनजाति के लोगों के शिक्षा स्तर में वृद्धि करना केन्द्र तथा राज्य सरकारों का उत्तरदायित्व हो गया है। जनगणना के आंकड़ों से पता चलता है कि वर्ष 1991 के जनगणना में भारत के अनुसूचित जनजातियों की साक्षरता दर 29.6 प्रतिशत थी जो वर्ष 2001 में बढ़ कर 47.1 प्रतिशत हो गई।

सरकार के इस पक्ष के अलावा भी कुछ दूसरे पक्ष हैं जिस पर सरकार को सोचने की बहुत जरूरत है जिसे रमणिका गुप्ता ने अपनी पुस्तक आदिवासी कौन में उभारा है। उन्होंने इस ओर ध्यान दिलाने की



कोशिश की है कि, पूर्वोत्तर के राज्यों को छोड़ कर अभी तक पश्चिम बंगाल के अलावा किसी भी अन्य प्रदेश में आदिवासियों को उनकी मातृभाषा में प्राथमिक शिक्षा नहीं दी जाती है। ऐसे में यह समाज कैसे विकसित होगा जिसे अपनी मातृभाषा से ही दूर रखा गया हो। अगर हम बिहार की बात करें तो राज्य सरकार ने, जिसमें झारखंड भी शामिल था, बरसों पहले आदिवासियों को मातृभाषा में पढ़ाने का कानून बना दिया था। राजनीतिक स्वार्थवश इस पर आगे कार्य नहीं हो सका और आज झारखंड के अलग होने के बाद भी प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा में देने का प्रावधान लागू नहीं हुआ है।

ऐसी स्थिति में जनजातीय लोग देश के अन्य लोगों से बहुत पीछे रह जाते हैं। हमें इस स्थिति का विश्लेषण करना चाहिए। शिक्षा प्राप्त कर लेना ही विकास का प्रभावी मापदंड नहीं होना चाहिए।

उपसंहार

आदिवासी समुदाय और चुनौतियाँ का अध्ययन करते समय पता चला कि अब तक जितने भी आन्दोलन आदिवासियों द्वारा किए गये, वह सब जल, जंगल और जमीन के लिए किये गए हैं और वही आन्दोलन समकालीन में आदिवासी विमर्श के पर्याय बने। जंगलों में सुकून से जीने वाले आदिवासी समाज को आखिर क्या जरूरत पड़ी थी ? कि वह आधुनिक मानव के विरुद्ध हथियार उठाने पर मजबूर हो गया । यह बात कहीं न कहीं आदिवासी समाज की समस्याओं की तरफ संकेत करता है। सन 72 का मल पहाड़िया आंदोलन, 1834-32 का कोल विद्रोह, 93 का मानगढ़ विद्रोह, 88 का तिलका माँझी विद्रोह, 1782 का तमाड़ विद्रोह, 89-20 का मुण्डा विद्रोह, 1820-2 का हो विद्रोह इत्यादि आदिवासी समाज के हक और हकूक की बात करते हैं। वेसे आदिवासी समाज की समस्याएँ भौगोलिक क्षेत्रों से अधिक जुड़ी हुई हैं। अगर सही मायने में देखा जाए तो समकालीन दौर में आदिवासी समुदाय की सामाजिक समस्याएँ, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक ओर नस्लीय समस्याओं के साथ ही भाषाई समस्या का भी प्रश्न उठ खड़ा हुआ है।

➤ संदर्भग्रंथ सूची

1. चन्देश्वर यादव (संपा.) - आदिवासी समाज का वैचारिक मूल्यांकन, आगमन प्रकाशन, हापुड, संस्करण - 2014, पृष्ठ - 08
2. जगदम्बा मल्ल - स्वतंत्रता सेनानी रानी गाइदिन्ल्यू, हेरिटिज फाउंडेशन, गुवाहाटी असम, संस्करण - 2014
3. सुनील गोयल, सुनीता गोयल - भारत में सामाजिक परिवर्तन, आर.बी.एस. पब्लिशर्स जयपुर, 2003, पृष्ठ- 47
4. रमणिका गुप्ता (संपा.) - आदिवासी लोक भाग, शिल्पायन प्रकाशन, दिल्ली, द्वितीय संस्करण - 2012, पृष्ठ - 5



5. डॉ. जे.पी.सिंह, समाजशास्त्र : अवधारणाएँ एवं सिद्धांत, लनिंग प्रा.लि., दिल्ली, द्वितीय संस्करण- 2005, पृष्ठ- 59
6. डॉ. जे.पी.सिंह - समाजशास्त्र के मूल तत्व, लनिंग प्रा.लि., दिल्ली, द्वितीया संस्करण- 2007, पृष्ठ- 58
7. सुनील गोयल , सुनीता गोयल - भारत में सामाजिक परिवर्तन , आर.बी.एस.ए , पब्लिशर्स , जयपुर, 2003, पृष्ठ- 309
8. डॉ.जे.पी.सिंह - आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन: 2 वीं सदी में भारत , शत लनिंग प्रा.लि. द्वितीय संस्करण - 2016, पृष्ठ - 25
9. अहमद, डॉ. एम. फ़िरोज़ , वाहन्य , त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका , आदिवासी विशेषांक- 2, अलीगढ़ , अक्टूबर 2013 , पृ.सं. 81
- 10.अहमद, डॉ .एम. फ़िरोज , वाहनय त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका , आदिवासी विशेषांक अलीगढ़ , 2013, पृ. सं. 100



**MULTIDISCIPLINARY COSMOPOLITAN JOURNAL OF RESEARCH
(MUCOJOR)-2583-9829 (On-line)**

International Peer Reviewed and Refereed Journal

Certification of Publication

The Board of Multidisciplinary Cosmopolitan Journal of Research (MUCOJOR) is hereby awarding
this certificate to

डॉ. हितेशकुमार लालसिंहभाई बामणिया

In recognition of the publication of the paper entitled
आदिवासी समुदाय की समस्याएँ एवं चुनौतियाँ पर एक लेख

Published in Volume 03, Issue 06, December 2025.

EDITOR IN CHIEF